17 hrs.

EXPORT OF COAL*

Mr. Deputy-Speaker: Now, we shall take up the half-an-hour discussion.

श्री रघुनाथ सिंह : (वाराणसी) : उपाध्यक्ष महोदय, आज हम यहां पर कोल के विषय में चर्चा करने जा रहे हैं। मैं इस सदन का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि दिन पर दिन कोल का एक्सपोर्ट कम होता जा रहा है। सन् १९४६ से लेकर सन् १९५७ तक भारत ३७ मुल्कों को कोल का एक्सपोर्ट किया था। आज यह तादाद घट करके कुल १४ रह गई सन् १९५८ में मई तक का जो आंकड़ा मुझे मिला है उससे साबित होता है कि छः और मुल्कों में कोल का एक्सपोर्ट करना बन्द कर दिया है। इस प्रकार ३७ मुल्कों में से केवल ७–८ मुल्कों में ही हिन्दुस्तान के कोल का एक्सपोर्ट होता है अपनी गलत नीति के कारण २९ मुल्कों को कोल के मामले में अपने हाथ से खो दिया है। सन् १९५८ में जिन मुल्कों को कोल एक्सपोर्ट करने का व्यापार हमने खोया है वे हैं सिंगापुर, साऊथ कोरिया, अदन, इजिप्ट, ईस्ट अफ्रीका, हांगकांग और कुछ जापान में भी। कि सन् १९५१ में २५ मुल्कों में कोल एक्सपोर्ट होता था। सन १९५२ में वह १९ मुल्कों में हुआ, १९५४ में १३ मुल्कों में, १९५५ में ११ मुल्कों में, १९५६ में ८ मुल्कों में और आज इन मुल्कों की तादाद घट कर ७ रह गई है। इन दस बरसों के अन्दर जहां पहले ३७ मुल्कों में हमारा व्यापार होता था वह अब घट कर सात आठ मुल्कों में ही रह गया है और २९ मुल्कों के साथ हमने अपना व्यापार खो दिया है।

एस्टीमेट्स कमेटी ने जब यह बात देखी तो उसने सन् १९५४–५५ की रिपोर्ट में इसकी ओर ध्यान आकर्षित किया। इस रिपोर्ट के सफा १९ पर आप यह लिखा हुआ देखेंगे :—

> "In May, 1953, surcharges were abolished but by that time India has already lost these markets."

एस्टीमेट्स कमेटी के इस रिपोर्ट के बावजूद भी हमने अपनी नीति को नहीं बदला और उसका परिणाम यह हुआ कि कुछ भी तरक्की नहीं हुई और हालत खराब होती चली गई।

मैंने अभी आपको मुल्कों की तादाद को बताया है। अब मैं आपको कोल के एक्सपोर्ट के आंकड़े बतलाना चाहता हूं। १९४८ में २२ लाख टन, ग्राड नम्बर को मैं छोड़ देता हूं, कोल हमने एक्सपोर्ट किया। १९४९ में २७ लाख टन एक्सपार्ट किया और १९५२ में ३३ लाख टन हमने एक्सपोर्ट किया, लेकिन १९५७ में यह तादाद ३३ लाख टन से घट कर १७ लाख टन रह गई अर्थात् केवल तीन वर्षों में हमने ५० प्रतिशत कोल की मार्किट को अपने हाथ से खो दिया। फिर भी हमारी आंखें खुली नहीं, हमारी नींद खुली नहीं। आप देखेंगे कि सन् १९२० से लेकर १९५६ तक जैसा मैंने आपको आंकड़ों से बताया, हमने करीब ५० प्रतिशत कोल की मार्केट खो दी, अब हमें पड़ोस की कंट्री को लेना चाहिये। सीलोन, बर्मा, सिंगापुर, मलाया, अदन और ईस्ट अफ्रीका, जहां हमारा होम ट्रेड है। अभी जब शिपिंग बिल चल रहा था उस वक्त मैंने कहा था होम ट्रेड के बारे में। हम सीलोन को सन् १९४९ में ३ लाख टन कोल एक्सपोर्ट करते थे। सन् १९५६ में आकर वह १ लाख टन हो गया, अर्थात् ७ वर्षों के अन्दर सीलोन को हमारा एक्सपोर्ट ३ लाख टन से घट कर १ लाख टन हो गया, और सन् १९५८ के पहले पांच महीनों में हमने सिर्फ ६,१३६ टन कोल सीलोन को एक्सपोर्ट किया। अगर

*Half-an-hour discussion.

[श्री रघुनाथ सिंह]

पांच महीनों में हम कुल ६ हजार टन कोल एक्सपोर्ट करते हैं, और इसी हिसाब से साल भर का अन्दाजा लगाया जाय, तो हम मुश्किल से १५ हजार टन कोल सीलोन को एक्सपोर्ट करेंगे । यह तो हमारी अवस्था है । ३ लाख टन से घट कर सीलोन को हमारा ट्रेड सन् १९५८ में १२ हजार या १५ हजार टन रह जायगा ।

इस्पात, खान और इंधन मंत्री (सरदार स्वर्ण सिंह) : मेरा इंटरफियर करने का इरादा नहीं है, लेकिन हम लोग ५०,००० टन कोल जनवरी से जून तक सन् १९५८ में भेज चुके हैं ।

श्री रघुनाथ सिंह : मैंने उसे जोड़ा है । यह सब कागज मैंने मिनिस्ट्री से मांगे थे और ये वहीं से आये हैं ।

उपाध्यक्ष महोदय : कहीं से आये हों, वह आनरेबल मेम्बर के कब्जे में हैं इसलिये मैं उन पर एतबार करता हूं ।

Sardar Swaran Singh: The hon. Member may continue his argument. Let him not enter into these figures.

Shri Nath Pai (Rajapur): They seem to be trading at the street corner.

श्री रघुनाथ सिंह : अब मैं सिंगापुर को लेता हूं । सिंगापुर को हम ने सन् १९४६ में १ लाख, ७९ हजार टन कोल एक्सपोर्ट किया । सिंगापुर एक मेजर हारबर है और सारे इंडोनीशिया और दूसरे स्थानों को उसके जहाजों से माल जाता है । इतना बड़ा जो हारबर सिंगापुर का है उसके लिये हमने सन् १९४६ में १ लाख, ७९ हजार टन कोल एक्सपोर्ट किया । सन् १९५१ में हमने कुल १ लाख, १६ हजार टन एक्सपोर्ट किया और सन १९५७ में सिर्फ ५५ हजार टन एक्सपोर्ट किया । इसके मानें यह हैं कि हमने दस वर्षों में ५० परसेंट मार्केट सिंगापुर की खो दी । अब सन् १९५८ की जो हमें किताब दी गई है उस से मालूम होता है कि सिंगापुर के लिये हिन्दुस्तान ने कोई कोल नहीं भेजा । मई सन् १९५८ तक हम ने सिंगापुर की मार्केट को बिल्कुल खो दिया ।

आप पाकिस्तान को लें । पाकिस्तान को हम सन् १९४८ के आंकड़े के अनुसार १६ लाख टन कोल एक्सपोर्ट करते थे । सन् १९४९ में हमने १९ लाख टन एक्सपोर्ट किया और सन् १९५७ में वह जा कर ९ लाख टन रह गया । अर्थात् ८ वर्षों के अन्दर पाकिस्तान में हमने ५० परसेन्ट से ज्यादा मार्केट खो दी, और सन् १९५८ की मई तक का जो आंकड़ा दिया है उस से साबित होता है कि हमने पाकिस्तान को सिर्फ १ लाख टन कोल एक्सपोर्ट किया है । अर्थात् हम साल भर के अन्दर अब पाकिस्तान को सिर्फ २ लाख टन कोल भेज सकते हैं जबकि सन् १९५७ में हम ९ लाख टन एक्सपोर्ट करते थे । यह हमारे उन तीन मुल्कों का हाल है जहां हमारा एकाधिकार था, जहां के लिये हम पूरा-पूरा कोल एक्सपोर्ट करते थे । वह मार्केट हमने खो दी, फिर पा सकेंगे या नहीं इसमें बहुत सन्देह है ।

यहां पर यह कहा जा सकता है कि शायद हमारे कोल का प्रोडक्शन कम हो गया हुआ इस वास्ते हम एक्सपोर्ट नहीं कर सकते । लेकिन जो प्रोडक्शन के आंकड़े दिये गये हैं उन से जाहिर होता है कि सन् १९५० में ३२ मिलियन टन कोल का प्राडक्शन हुआ और सन् १९५७ में ४३ मिलियन टन प्रोडक्शन हुआ । अर्थात् प्रोडक्शन तो कम नहीं हुआ, लेकिन हमने अपनी एक्सपोर्ट के मार्केट खो दी । उस दिन मैंने स्वर्ण सिंह जी से प्रश्न पूछा था कि आखिरकार जब कोयला हमारे पास इतना है तो हम अपने बाहर की एक्सपोर्ट मार्केट क्यों खोने जा रहे हैं ? इस का कोई कारण तो होना

चाहिये क्योंकि जब व्यापारी एक बार बाजार खो देते हैं, एक दफा जब दुकान बन्द कर लेते हैं, तो दुबारा दुकान चलाने में बहुत समय लगता है, तब कहीं जा कर दुकानदार उस को चला सकता है। उस दिन जब मैंने प्रश्न किया था तो मंत्री जी ने बहुत सहानुभूतिपूर्वक उसका उत्तर भी दिया था कि वह भी चाहते हैं कि कोल के व्यापार की वृद्धि हो। लेकिन हमारे सामने सब से बड़ा सवाल पैदा हो गया चाइना का। आखिरकार हमारी मार्केट ली किसने ? हमारी बर्मा की मार्केट ली, सीलोन की मार्केट ली, सिंगापुर की मार्केट ली, लेकिन वह ली चाइना ने। चाइना केवल कोल की मार्केट नहीं ले रहा है, बल्कि हमारी कपड़े की मार्केट भी चाइना ने कैप्चर कर ली है। बर्मा में हम हिन्दुस्तानियों की तादाद करीब ९ परसेंट है। थाईलैंड में जितना काटन क्लाथ का व्यापार है वह नामधारी सिखों के हाथ में है, और कुछ खत्रियों के हाथ में भी है। बैंकाक में जितनी भी कपड़े की दुकानें हैं सब नामधारी सिखों की हैं, कुछ खत्री हैं और कुछ यू० पी० के लोग हैं। उनसे मैंने बात की। उन्होंने कहा कि हम कपड़े का व्यापार खो रहे हैं। मैंने उनसे पूछा कि आखिर आप हिन्दुस्तान के आदमी हैं, आप कपड़े का व्यापार क्यों खो रहे हैं ? उन्होंने कहा कि हिन्दुस्तान की पालिसी ही ऐसी है। हमने इम्पोर्ट तो बन्द कर दिया हम चाहते हैं कि हमारा सामान दूसरे लोग खरीदें लेकिन हम दूसरों का सामान न खरीदें। इसी तरह हर मुल्क सोचने लगा। मलाया भी सोचने लगा, इंडोनेशिया भी सोचने लगा, सब सोचने लगे कि हिन्दुस्तान हमारा माल नहीं खरीदता तो हम हिन्दुस्तान का सामान क्यों खरीदें। लिहाजा इन मार्केट्स को हमने खो दिया। अगर हम इन मुल्कों को अपना माल एक्सपोर्ट करते हैं तो हमको उन मुल्कों के माल को इम्पोर्ट भी करना चाहिये। हम सोचते हैं कि हम दूसरे मुल्कों से रुपया ले लें, लेकिन उनको रुपया न दें। इस तरह से एक तरफा प्यार नहीं हो सकता। इसलिये चाइना ने दूसरी नीति अपनाई। उसने बार्टर की नीति अपनाई, और वह यह कि जो कोल हम तुम्हें सप्लाई करते हैं उसके बदले में तुम हमें अपना माल दो। लिहाजा इन मुल्कों की मार्केट्स को चाइना ने कैप्चर कर लिया। चाइना ने कोल की मार्केट को कैप्चर किया और जापान ने कपड़े की। और हम आज कहीं नहीं रहे।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता था कि बर्मा में हिन्दुस्तानियों की इतनी तादाद है, थाईलैंड में इतनी तादाद है। मलाया में हिन्दुस्तानियों की तादाद १२ परसेंट है और सिंगापुर में हिन्दुस्तानियों की तादाद १३ परसेंट। तो बर्मा में, थाईलैंड में, इंडोनेशिया में, सिंगापुर में, मलाया में जो कम्पिटीशन है वह हिन्दुस्तान के व्यापारी में और चाइना के व्यापारी में है जो कि वहां रहते हैं। बहुत दिन नहीं हुये, जब मैं वहां गया। हमें बताया गया कि हिन्दुस्तान के व्यापारी में और चाइना के व्यापारी में इतना कम्पिटीशन है कि पता नहीं पांच या दस वर्षों के अन्दर वहां कोई हिन्दुस्तानी व्यापारी बच भी सकेगा या नहीं। मगर गवर्नमेंट की तरफ से वहां एक आदमी भी नहीं गया। हमारी इतनी बड़ी पापुलेशन है साउथ ईस्ट एशिया में, थाईलैंड में, बर्मा में। लेकिन कोई कदम नहीं उठाया गया वहां के हिन्दुस्तानी व्यापारियों को कांफिडेंस में ले कर उनके द्वारा अपना व्यापार बढ़ाने के लिये। दूसरी तरफ चाइनीज गवर्नमेंट हर एक चाइनीज का खयाल रखती है। जो चाइना के व्यापारी हैं, उन में से हर एक समझता है कि हम चाइना का सामान ले कर यहां बेचें। आप जानते हैं कि सारे साउथ ईस्ट एशिया में, बर्मा, कम्बोडिया, थाईलैंड और वियटनाम में चाइनेपज पापुलेशन करीब ३० परसेंट है। यह पापुलेशन चाहती है

[श्री रघुनाथ सिंह]

कि हम चाइना का माल लाकर वहां बेचें। हम चीन का क्लाथ बेचें। चीन गवर्नमेंट की तरफ से कोशिश हो रही है लेकिन हमारी गवर्नमेंट की तरफ से कोई कोशिश नहीं हो रही है। हमारी वहां पर इतनी बड़ी पापुलेशन होते हुये भी, हम अपने भाइयों के साथ हमदर्दी जाहिर करें और उनसे राय ले कर हम अपने व्यापार की वहां पर तरक्की करें, इसके लिये कोशिश हमारी तरफ से नहीं हो रही है।

चीन का कोयला वार्टर सिस्टम पर है। चीन का कोयला सस्ता पड़ता है और उसके सस्ता होने का कारण चीन का कोयला आज वहां पर बहुत ज्यादा एक्सपोर्ट हो रहा है। हमें भी यह सोचना चाहिये कि चीन के कम्पीटीशन का हम कैसे मुकाबला कर सकते हैं।

श्री सरदार स्वर्ण सिंह यह बात सोच रहे हैं कि हमारा एक्सपोर्ट कैसे बढ़े। अभी हमारे यहां आयल निकल आया है हमारे यहां कोयला इतना भरा पड़ा हुआ है तो मैं समझता हूं कि हमारी फ्यूल की समस्या आसानी के साथ हल हो सकती है। इस वास्ते आज जो भी हमारा मार्केट बचा हुआ है, ७, ८ मुल्कों में जहां हमारा कोयला जाता है, वहां पर जाता रहे और वह मार्केट हमारे हाथ में बना रहे और साथ ही साथ हमारी यह कोशिश होनी चाहिये कि दूसरे मार्केट्स और खास कर इंडियन ओशन का जो मार्केट है, उन मार्केटों में भी हमारा कोयला जाये ताकि फ़ारेन एक्सचेंज मनी की जिसकी कि हमें बहुत जरूरत है वह हमें प्राप्त हो सके। अकेले वन वे ट्रैफ़िक से यह काम बनने वाला नहीं है। उसके लिये हमें जहां जरूरी सामान मंगाना होगा वहां हमें अपना सामान बाहर के देशों में भेजना भी चाहिये।

उपाध्यक्ष महोदय, मैं आशा करता हूं कि श्री सरदार स्वर्ण सिंह आवश्यक कदम उठायेंगे ताकि आज जो हम २६ मुल्क खो चुके हैं उनमें हमारा व्यापार फिर बढ़े और वहां के जो हिन्दुस्तानी भाई हैं उनको अपने साथ में लेकर और अपने कांफिडेंस में ले कर हिन्दुस्तान के व्यापार की अभिवृद्धि करेंगे। ऐसा करने से मुझे विश्वास है कि हमारे देश का व्यापार तरक्की करेगा।

Mr. Deputy-Speaker: The hon. Minister. The time is equally divided between the two.

Sardar Swaran Singh: I am sorry, Sir, but I thought he had taken fifteen minutes and so I might also require fifteen minutes.

Shri Raghunath Singh: It is a two way traffic; 50 : 50.

Sardar Swaran Singh: But not on a barter basis, I suppose.

Mr. Deputy-Speaker, so far as the anxiety of the hon. Member to see that we export as much coal as possible is concerned, I am one with him; there is no dispute on that score.

The present discussion arose out of the fall in our exports to Ceylon; so I would first deal with that matter before I say something about the other general issues that have been raised by the hon. Member who has raised this discussion. So far as Ceylon is concerned; it has to be remembered that our exports to Ceylon have not been very sizeable at any time. It is true that Ceylon being next door, we are naturally the suppliers to Ceylon.

Our general policy in the matter of export of deal has not in the past been motivated by a very strong desire to push out as much as we can and, even recalling the whole thing in retrospect, I think that the policy cannot be said to be incorrect. We have got our own

internal requirements. Our policy has been somewhat like this. There are certain countries that adjoin India, and naturally India is a source of supply to those countries. Our attitude has been that consistent with our internal requirements we should undertake the responsibility of looking after their coal requirements. Our attitude has been more or less of going to their help and assistance—although in particular matters this is always mutual—in the matter of supply of coal. That has been our attitude with regard to our supplies to many of the countries. Although the list is not as large as 37 which he read out, in most of these countries in the South-East Asian region, in the southern Asian region and in Pakistan our attitude has been that of meeting their requirements as best as we can, regard having always had to our internal requirements. That has broadly been our policy.

The exports to these various countries have varied from time to time depending upon the general conditions prevailing elsewhere. The hon. Member has picked up the figures of exports for the year 1952. That, I concede, was a year of boom exports, but I would like to remind this hon. House that the year 1952 cannot, by any stretch of imagination or any accepted standards, be regarded as a representative year. There were many exceptional circumstances, mostly of an international character, arising out the post-Korean conditions. There was a certain spurt in exports because other sources were cut out. To quote only one example—I do not want to burden my submission by putting in too many details—to Japan alone, in 1952, we sold 7,65,000 tons of coal. Every one knows that Japan is a big producer of coal, and their demand has always been erratic. They might like to import for certain reasons certain quantities from India, but that cannot be regarded, by any standards, as a market which can be termed as a stable or constant market. From seven lakhs in 1952 they came down and purchased only 17,000 tons in 1955, and in 1956 it has come down to only 11,000 tons. Therefore, the 1952 figures, upon which my hon. friend relied for the purpose of comparison, cannot be termed as representative figures, nor can the year be termed as a representative year.

Our attitude in the matter of supply of coal to Pakistan has also been in the spirit of discharging our obligations, because they had all along been purchasing coal from our Raniganj—Bihar areas, the Central India areas, and we rightly entered into a trade agreement with them and undertook to supply roughly 1.2 million tons of coal to Pakistan. Out of this, to East Pakistan we are to supply 55,000 tons per month by rail and river. To West Pakistan we are to supply 30,000 tons per month by rail. To both East and West Pakistan we are to supply 15,000 tons per month by sea or river. This is broadly the agreement, the total being 1.2 million tons per year. We could push more coal if the bottle-neck of Moghal Sarai was not there. That expression is quite familiar to the ears of the hon. Members here. The difficulties that we experience in the movement of wagons above Moghal Sarai stand in the way of moving coal to West Pakistan, because movement to West Pakistan by rail means movement of wagons above Moghal Sarai, and there being a bottle-neck, that sets the limit up to which we can supply coal to West Pakistan by rail.

The hon. Member comes from Uttar Pradesh, and I have got some personal experience of Punjab. I know how starved both these areas have been, particularly in certain categories of coal mostly on account of the movement difficulties above Moghal Sarai. In spite of these difficulties, we have tried to do our best to honour our commitments with regard to the supply of coal to Pakistan.

Then, so far as Ceylon is concerned, I think it requires a somewhat detailed statement because this discussion has arisen out of the supplies to Ceylon. During 1956 a total of 1,90,000 tons—I am giving in round figures—was exported and in 1957, 2,06,000

[Sardar Swaran Singh]

tons were exported. As against these, exports during the first half of the current year are only 50,000 tons. It is not as bad as Shri Raghunath Singh tried to make out. I concede that it is very much less than that in the year 1957, and I will presently come to the reason for this supply in a reduced quantity. In September last year, the Ceylon railways invited tenders for the supply of 1,76,000 tons of coal for the railway's requirements; in 1958 we were able to obtain orders for the supply of only half of this quantity, the other half going to China. It was reported to us that China was able to obtain this order due to the fact that Ceylon shipping lines were able to transport coal from China at a rate of 39 shillings per ton f.i.o. This will be interesting; this was also the rate for Indian coal from Calcutta to Colombo. Both these were transported by the Ceylonese shipping lines and they are transporting coal from Calcutta to Colombo and from China to Colombo almost at the same rates. What is the mystery of this, I would not like to go into, but I would leave the House guessing as to what could be the reason behind this.

Shri Raghunath Singh: It is practically the bungling of the shipping company.

Sardar Swaran Singh: I am not bungling. I am supplying f.o.b. coal to Ceylon at a price which is a shade lower than the f.o.b. price in China, although I am entitled, on account of our geographical nearness to Ceylon, to certain freight differential. Even if the f.o.b. cost in India were slightly higher, normally it should be offset by the lower freights, but actually, the quotation with regard to f.o.b. prices is a shade lower from India as compared to coal from China.

For instance, the F.O.B. prices of Indian and Chinese coal are Rs. 36 and Rs. 39.6 per ton respectively. The cost in India is Rs. 3 lower than the F.O.B. cost in China. A query can be well raised as to what can be the reason for this. It would be too much for me to go into the reasons which motivated the Ceylonese buyers to prefer Chinese coal to Indian coal.

There is something in what Mr. Raghunath Singh said that there was a barter agreement. I want to tell him that the barter appears to have been entered into not with a view really to push out Chinese coal, but really to purchase rubber, which is really the commodity which Ceylon is anxious to sell for a variety of reasons which are not unknown to the House, and which China is anxious to purchase. The sources of purchase of rubber to China are not many and if they can purchase rubber from Ceylon, they would welcome that and in exchange, they are prepared to supply coal; the price also can be adjusted by the mutual consent of the two parties.

This is the story with regard to Ceylon, but it should be appreciated that this is not by any means a large quantity and when we quote a price, it is reasonable that we should leave it to the buyer to make a selection. If a selection has been made, we should not make that a point of grievance. For instance, when we invite tenders, there are various quotations from the Soviet Union, West Germany, U.K., U.S.A, and so on. Having regard to a variety of circumstances, we decide to purchase from one country. Then the other countries from which we have not purchased are not entitled to make that a point of grievance. If they do so, we do not accept that as a point of grievance. Similarly when we are in international trade, we should not make it a point of grievance merely because another person is not purchasing at the price we are quoting.

Now that our exports and imports are likely to increase—it is our desire that they should increase—situations like this might arise not only in coal, but in a number of other commodies also After all, so far as our total export earnings are concerned, coal has never been a big export earner. It is a very bulky thing. A lot of

problems of export and a variety of other problems arise and the resultant money that we get by way of foreign exchange is not by any means spectacular. Still, we have approached this problem with a view more or less to meet our obligations to our neighbouring countries which look upon us as a natural source of supply. Incidentally it is also a valuable foreign exchange earner which we can spare consistent with our internal requirements. That has broadly been our approach.

As a result of our recent foreign exchange difficulties, we are anxious to earn more foreign exchange and even at some sacrifice, we have taken a decision that during the remaining period of the current year, we might be able to export two lakh tons of even metallurgical coal, which is not easy for us to spare. We have to weigh the necessity to earn foreign exchange as against our capacity to spare. Even at some pinch, we have taken a decision that we will be prepared to export two lakh tons. During the next year, our intention is to export even five lakh tons of metallurgical coal. This will be at some sacrifice and it may cause some strain in view of our steel plants reaching a fairly advanced stage during the next year. The decision to export 5 lakh tons of even metallurgical coal is a point which clearly shows not only our desire to preserve the markets but our anxiety to explore new ones where there will be buyers for metallurgical coal even outside those countries which are near us geographically.

The hon. Member was surprised by the number of countries that we have lost. Being a democrat leader, he believes in numbers. But I think that number of countries apart, it is the quantity exported that matters, and the decline has not been of the order which he tried to make out, merely because the number of countries to whom it was being exported was cut out. Among some of the countries about which he mentioned, we were sending some hundreds or thousands of tons. There may be even a two-digit number of tons sent to a country. Even that country will figure among the 37. But surely cutting out 50 tons or even 900 tons will not make such a big drop in our exports. Therefore, we have to look at the total tonnage that is exported, and not at the number of countries to whom we are supplying.

Looked at from that angle, over the last several years, if we exclude the boom year of 1952, the total exports in tonnage are as follows:

1953	—	19 lakhs tons
1954	—	20 ,,
1955	—	18 ,,
1956	—	17 ,,
1957	—	17 ,,
Up to June 1958	—	7,52,000 tons

Shri Tangamani (Madurai): How much for 1952?

Sardar Swaran Singh: In 1952 we exported 33 lakh tons.

So, we will have to adopt an attitude of understanding when we are talking of our neighbour countries with whom our relations are very friendly, and compete in a clean and healthy manner trying to push out our best things, but never entering trade in a spirit of letting down other countries.

Some other questions have been raised about the general attitude on textiles and other matters. I do not think that is relevant to the discussion before us.

17.33 hrs.

The Lok Sabha then adjourned till Eleven of the Clock on Wednesday, the 24th September, 1958.